<u>**गैर - प्रतिवेद्य**</u>

भारत का उच्चतम न्यायालय

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

आपराधिक अपील संख्या 36/2022

(एसएलपी (सीआरएल) संख्या 4062/2020 से उत्पन्न)

मनोज कुमार खोखर **... अपीलकर्ता (ओ)**

बनाम

राजस्थान राज्य और अन्य **...उत्तरदाता (ओ)**

<u>**निर्णय**</u>

नागरत्ना जे.

1. यह अपील आवेदक अपीलार्थी द्वारा दिनांक 7 मई 2020 को राजस्थान उच्च न्यायालय, पीठ जयपुर द्वारा एकल पीठ फ़ौजदारी विविध जमानत प्रार्थना पत्र संख्या 3601/2020 मे पारित चुनौतीग्रस्त आदेश में प्रस्तुत की गयी है, जिससे प्राथमिकी संख्या 407/2019 पुलिस

स्टेशन कालवाड़ के संबंध में आरोपी को जमानत दे दी गई है, जो कि इस अपील में द्वितीय प्रत्यर्थी है।

2. अपीलकर्ता के अनुसार, वह मृतक राम स्वरूप खोखर का पुत्र है और जिसने 8 दिसंबर, 2019 को प्रथम सूचना रिपोर्ट संख्या 407/2019 भारतीय दंड संहिता, 1980 (इसके पश्चात संक्षिप्तता के लिए "भा.द.स."के रूप में संदर्भित) की धारा 302 के तहत अपने पिता की हत्या के अपराध के लिए द्वितीय प्रत्यर्थी आरोपी राम नारायण जाट के खिलाफ दर्ज कराई थी।

3. उक्त प्राथमिकी दिनांक 8 दिसंबर, 2019 को अपीलकर्ता द्वारा रात 23:00 बजे से 23:30 बजे के बीच दर्ज कराई गई थी, जिसमें कहा गया था कि उस दिन लगभग 16:00 बजे, उसके पिता, जिसकी आयु लगभग 55 वर्ष, पर प्रत्यर्थी अभियुक्त ने लालपुरा पचर बस स्टैंड पर जान से मारने की नीयत से हमला किया था। प्रत्यर्थी-आरोपी ने मृतक को जमीन पर पटक दिया, उसकी छाती पर बैठ गया और जबरदस्ती उसका गला घोंट दिया, जिससे उसकी मौत हो गई। प्रत्यर्थी-आरोपी के कुछ साथियों ने, जो घटना स्थल पर मौजूद थे, हमला करने और मृतक को मारने में उसकी मदद की। सूचनाकर्ता अपीलकर्ता ने प्राथमिकी में आगे कहा कि प्रत्यर्थी-आरोपी, उसके भाइयों अर्थात् अर्जुन, सत्यनारायण और ओकरामल और मृतक के बीच पहले से ही प्रतिद्वंद्विता थी। मृतक ने पहले अपीलकर्ता और परिवार के कुछ सदस्यों को इस तरह की

प्रतिद्वंद्विता के बारे में सूचित किया था और बताया था कि इस कारण वह अपनी सुरक्षा के बारे में आशंकित था। घटना के दिन प्रत्यर्थी-आरोपी अपने एक भाई ओकरामल के साथ सुबह अपीलकर्ता के घर गया था और मृतक के साथ दुर्व्यवहार किया था। 9 दिसंबर, 2019 को आयोजित शवपरीक्षा की रिपोर्ट में दर्ज किया गया है कि मृतक की "मृत्यु पूर्व गला घोंटने के कारण श्वासावरोध" के परिणामस्वरूप मृत्यु हुई थी।

4. प्रत्यर्थी-आरोपी को उक्त प्राथमिकी संख्या 407/2019 के संबंध में 10 दिसंबर, 2019 को गिरफ्तार किया गया था और उसे न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया था। प्रत्यर्थी-अभियुक्त लगभग एक वर्ष और पांच महीने की अवधि के लिए न्यायिक हिरासत में रहा जब तक कि उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश द्वारा उसे जमानत नहीं दी गई।

5. उपरोक्त प्राथमिकी के संबंध में जांच करने के बाद पुलिस द्वारा अतिरिक्त मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, जयपुर के न्यायालय के समक्ष आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। दिनांक 12 मार्च, 2020 के आदेश द्वारा अतिरिक्त मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट ने अपराध का संज्ञान लिया और मामले को विचारण और अधिनिर्णय के लिए जिला एवं सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया।

6. प्रत्यर्थी-आरोपी ने पहले दो मौकों पर अतिरिक्त मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट नंबर 9, जयपुर मेट्रोपॉलिटन, जयपुर की अदालत के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 437 (संक्षेप में, "द.प्र.सं.") के तहत

जमानत की मांग करने वाले आवेदनों को प्रस्तुत किया था। इसे 23 जनवरी, 2020 और 6 मार्च, 2020 के आदेशों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया। आरोपी ने द.प्र.सं. की धारा 439 के तहत जमानत याचिका भी दायर की थी, जिसे अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश नंबर 5, जयपुर मेट्रोपॉलिटन ने 12 मार्च, 2020 के आदेश द्वारा अभियुक्तों के खिलाफ कथित अपराधों की गंभीरता के संबंध में खारिज कर दिया था। प्रत्यर्थी अभियुक्त ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक और जमानत याचिका दायर की और दिनांक 7 मई, 2020 के आक्षेपित आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने उसे जमानत पर रिहा किया। प्रत्यर्थी अभियुक्त को जमानत दिए जाने से व्यथित होकर, सूचनाकर्ता-अपीलकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष यह अपील को प्रस्तुत की है।

7. हमने अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री बसंत आर. और प्रत्यर्थी अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता श्री आदित्य कुमार चौधरी को सुना है और अभिलेख पर सामग्री का अवलोकन किया है।

8. अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि मृतक 2015 में मांधा भोपावासपचार गांव, झोटवाड़ा तहसील, जयपुर, राजस्थान के उप सरपंच के रूप में निर्वाचित हुए थे। आरोपी और उसके परिवार के विरोध के बावजूद उसे इस पद पर चुना गया। आरोपी के परिवार का गांव में काफी प्रभाव था और वे मृतक को फरवरी, 2020 में होने वाले सरपंच पद के चुनाव लड़ने से रोकने की कोशिश कर रहे थे।

ऐसी राजनीतिक शत्रुता के कारण, प्रत्यर्थी अभियुक्त अपने भाइयों अर्जुन, सत्यनारायण और ओकरामल के साथ 8 दिसंबर, 2019 को सुबह अपीलकर्ता के घर गया और मृतक के साथ दुर्व्यवहार किया और बाद में उसी दिन मृतक की हत्या कर दी। अपीलकर्ता के अनुसार, मृतक अपने दोनों पैरों की 54% स्थायी शारीरिक दुर्बलता से पीड़ित था और इसलिए प्रत्यर्थी अभियुक्त उस पर हावी हो गया था, जिसने मृतक को जमीन पर पटक दिया था, उसकी छाती पर बैठ गया और उसकी गर्दन को दबा दिया, जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई।

9. आगे यह आग्रह किया गया कि उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी अभियुक्त को जमानत मंजूर करने में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग नहीं किया है। उच्च न्यायालय ने कथित अपराध की गंभीरता और उसे कारित करने के गंभीर तरीके को ध्यान में नहीं रखा है, जिसमें शारीरिक दुर्बलता के कारण अपना बचाव करने में असमर्थ व्यक्ति के खिलाफ अपराध किया गया था।

10. यह तर्क दिया गया कि आरोपी और मृतक के परिवार के बीच पूर्व दुश्मनी के तथ्य को जमानत देने के संबंध में अभियुक्त पर लगे आरोपों के संदर्भ में उच्च न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया है। प्रत्यर्थी-आरोपी, भोपावासपचार गांव में उच्च राजनीतिक प्रभाव का प्रयोग करने वाला व्यक्ति है, जिसके फरार होने या गवाहों या मृतक के परिवार को धमकाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है। ऐसे में

जमानत पर रिहा होने से मुकदमे पर असर पड़ने से इंकार नहीं किया जा सकता। यह कि पुलिस शुरू में प्रत्यर्थी अभियुक्त के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज करने से भी हिचक रही थी। दरअसल, मृतक के परिजनों द्वारा थाने के बाहर किए गए विरोध प्रदर्शन के चलते ही आरोपी को पुलिस ने 10 दिसंबर, 2019 को गिरफ्तार कर लिया था। यह तर्क दिया गया कि आरोपी, गाँव का एक बहुत प्रभावशाली व्यक्ति होने के नाते, सबूतों के साथ छेड़छाड़ और गवाहों को प्रभावित करके मुकदमे को प्रभावित कर सकता है।

अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, उच्च न्यायालय ने इस मामले में जमानत देने के लिए कारण नहीं बताए हैं, जिसमें आरोपी के खिलाफ एक जघन्य अपराध का आरोप लगाया गया है, जिसके लिए, यदि अभियुक्त को दोषी ठहराया जाता है, तो उसे आजीवन कारावास या यहां तक कि मृत्यु दंड की सजा दी जा सकती है।उच्च न्यायालय ने एक बहुत ही क्रिप्टिक आदेश में, बिना किसी भी तर्क को खारिज करते हुए प्रत्यर्थी अभियुक्त को जमानत दे दी है। यह आग्रह किया गया कि प्रत्यर्थी अभियुक्त को जमानत देना कानून के स्थापित सिद्धांतों और इस न्यायालय के निर्णयों के विपरीत था। अपीलार्थी, जो मृतक का पुत्र है, की ओर से यह निवेदन किया गया कि आक्षेपित आदेश को अपास्त करते हुए इस अपील को स्वीकार किया जाए।

11. अपनी दलीलों के समर्थन में, अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने इस न्यायालय के कुछ निर्णयों पर भरोसा किया, जिन्हें आगे संदर्भित किया जाएगा।

12. इसके विपरीत, श्री आदित्य कुमार चौधरी, प्रत्यर्थी-आरोपी के विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया कि आक्षेपित आदेश इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की गारंटी देने वाली किसी भी दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है। अभियुक्त को झूठा फंसाने के लिए सूचनाकर्ता अपीलकर्ता ने घटनाओं का एक असत्य संस्करण सुनाया है। मृतक और अभियुक्त के परिवारों के बीच पूर्व शत्रुता से स्पष्ट रूप से इंकार करते हुए यह कहा गया है कि दोनों परिवारों ने सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखे, जो तथ्य 7 फरवरी 2020 के चार्जशीट के निष्कर्षों से प्रमाणित होता है, जिसमें यह दर्ज है कि मृतक और प्रत्यर्थी अभियुक्त एक ही गांव के थे और रिटायरमेंट के बाद से दोनों रोजाना लालपुरा बस स्टैंड पर साथ में ताश खेलते थे और ऐसा कोई सबूत नहीं है जो उनके बीच दुश्मनी का सूचक हो। 8 दिसंबर, 2019 को मृतक और अभियुक्तों के बीच अचानक हुई हाथापाई एक अकेली घटना थी और जो उनके बीच पहले से चल रहे किसी विवाद के संबंध में नहीं थी।

यह भी कहा गया कि सूचनाकर्ता अपीलकर्ता द्वारा प्राथमिकी दर्ज करने में काफी और अस्पष्टीकृत देरी हुई थी जो इस तथ्य का प्रमाण है कि यह एक बाद के विचार के रूप में दर्ज किया

गया था और इसलिए यह घटना के अपीलकर्ता के संस्करण की झूठी प्रकृति व उसकी प्रस्तुति के समर्थन में तथ्यों का सही वर्णन नहीं करता है। प्रत्यर्थी अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने घटना के चश्मदीद गवाहों के बयानों पर भरोसा करते हुए कहा है कि घटना की तारीख मृतक और प्रत्यर्थी अभियुक्त के बीच अचानक हाथापाई हुई और आरोपी ने मृतक का गला घोंट दिया। अलग होने के बाद, मृतक बसस्टॉप पर एक बेंच पर बैठ गया लेकिन बाद में बेहोश हो गया और उसे तुरंत अस्पताल ले जाया गया जहां उसकी मौत हो गई। एक चश्मदीद गवाह, अर्थात् मंगलचंद द्वारा आगे यह कहा गया है कि अभियुक्त के भाई घटना के समय उपस्थित नहीं थे ।

प्रत्यर्थी अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने **निरंजन सिंह और अन्य बनाम प्रभाकर राजाराम खरोटे और अन्य, [1980] 2 एससीसी 559** को यह तर्क देने के लिए संदर्भित किया कि जमानत अर्जी पर फैसला करने वाली अदालत को मामले की खूबियों पर विस्तृत चर्चा से बचना चाहिए चूंकि ट्रायल से पहले के चरण में तथ्यों की विस्तृत चर्चा से निष्पक्ष सुनवाई पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इसके अलावा, प्रत्यर्थी अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि प्राथमिकी संख्या 407/2019 के संबंध में जांच सभी तरह से पूरी हो चुकी है और आरोप पत्र प्रस्तुत किया जा चुका है।इसलिए, किसी गवाह को प्रभावित करने या साक्ष्य के साथ छेड़छाड़

करने के बारे में कोई सवाल नहीं उठता है। अभियुक्त की समाज में गहरी जड़ें हैं और इसलिए वह फ़रार होने का प्रयास नहीं करेगा। इसके अलावा, आरोपी का कोई आपराधिक इतिहास भी नहीं है और विचाराधीन घटना अचानक हाथापाई के परिणामस्वरूप हुई और इसलिए, प्रथम दृष्टया, आरोपी के खिलाफ आईपीसी की धारा 300 के तहत अपराध नहीं बनाया जाता है। इसलिए, प्रत्यर्थी अभियुक्त को जमानत देने का आक्षेपित आदेश इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की मांग नहीं करता है।

13. सूचनाकर्ता अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री बसंत आर. के इस तर्क को ध्यान में रखते हुए कि अभियुक्त प्रत्यर्थी को जमानत देने का आक्षेपित आदेश किसी भी तर्क से परे है और ऐसा आदेश आकस्मिक और गूढ़ है, हम उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 7 मई 2020 के आक्षेपित आदेश का अंश निकालते हैं, जो जमानत देने के लिए न्यायालय का "तर्क" है, जो निम्नानुसार है:

"मैंने प्रस्तुतियाेें पर विचार किया है और चालान के कागजात और पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट का अवलोकन किया है, लेकिन मामले के गुण और दोषों पर कोई राय व्यक्त किए बिना, मैं आरोपी याचिकाकर्ता को जमानत पर रिहा किया जाना उचित समझता हूं। इसलिए, इस जमानत आवेदन को स्वीकार किया जाता है और यह निर्देश दिया जाता है कि आरोपी याचिकाकर्ता राम नारायण जाट पुत्र श्री भिंवा राम को उपरोक्त प्राथमिकी के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के तहत

जमानत पर रिहा किया जाएगा, बशर्ते वह 50,000/रुपये की राशि का एक निजी मुचलका और संबंधित मजिस्ट्रेट की संतुष्टि के लिए समान राशि का एक मुचलका इस शर्त के साथ प्रस्तुत करता है कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 437 (3) के तहत निर्धारित सभी शर्तों का पालन करेगा।"

14. आगे कार्यवाही करने से पहले, किसी अभियुक्त को जमानत मंजूर करने के मामले में इस न्यायालय के निर्णयों को इस प्रकार निर्दिष्ट करना उपयोगी होगाः

क) **गुडिकांत नरसिम्हुलु और अन्य बनाम लोक अभियोजक, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय (1978) 1एससीसी 240** में, न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने विचारण के अधीन व्यक्ति की स्वतंत्रता के संदर्भ में भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की अंतर्वस्तु 10 पर विस्तार से चर्चा करते हुए उन प्रमुख कारकों को अधिकथित किया है जिन पर जमानत मंजूर करते समय विचार किया जाना चाहिए, जिनका निम्नलिखित रूप में निष्कर्षण किया गया हैः

“7. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि आरोप की प्रकृति महत्वपूर्ण कारक है और साक्ष्य की प्रकृति भी प्रासंगिक है। सजा जिसके लिए पार्टी उत्तरदायी हो सकती है, अगर दोषी ठहराया जाता है या सजा की पुष्टि की जाती है, तो मुद्दे पर भी असर पड़ता है।

8. एक अन्य सुसंगत कारक यह है कि क्या न्याय के अनुक्रम को उस व्यक्ति द्वारा विफल किया जाएगा जो न्यायालय के उदार अधिकार क्षेत्र को कुछ समय के लिए मुक्त करने की मांग करता है।

9. इस प्रकार कानूनी सिद्धांत और व्यवहार न्यायालय को मान्य करते हैं कि आवेदक द्वारा अभियोजन पक्ष के गवाहों के साथ हस्तक्षेप करने या अन्यथा न्याय की प्रक्रिया को प्रदूषित करने की संभावना पर विचार किया जाए। इस संदर्भ में, यह न केवल पारंपरिक है बल्कि तर्कसंगत भी है कि जमानत के लिए आवेदन करने वाले व्यक्ति के पूर्ववृत्त की जांच की जाए ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या उसका विपरीत रिकॉर्ड है-विशेष रूप से एक रिकॉर्ड जो बताता है कि जमानत पर रहते हुए उसके गंभीर अपराध करने की संभावना है। आदतों के संबंध में, यह आपराधिक इतिहास का हिस्सा है कि एक विचारहीन जमानत आदेश ने जमानती को प्रत्यर्थी के आपराधिक रिकॉर्ड के बारे में और अधिक बताने के अवसर का लाभ उठाने में सक्षम बनाया है, इसलिए यह अप्रासंगिक नहीं है।"

(ख) **प्रहलाद सिंह भाटी बनाम एनसीटी ऑफ दिल्ली और अन्य - (2001) 4 एससीसी 280** में, इस न्यायालय ने उन पहलुओं पर प्रकाश डाला जिन पर जमानत मांगने वाले आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय द्वारा विचार किया जाना है। इसे निम्नलिखित रूप में निकाला जा सकता हैः

"जमानत देने के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग प्रत्येक मामले की परिस्थितियों के संबंध में अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांतों के आधार पर किया जाना चाहिए, न कि मनमाने तरीके से। जमानत मंजूर करते समय, न्यायालय को आरोपों की प्रकृति, उनके समर्थन में साक्ष्य की प्रकृति, दंड की गंभीरता, जो दोषसिद्धि में शामिल होगी, अभियुक्त का चरित्र, व्यवहार, साधन और स्थिति, ऐसी परिस्थितियां जो अभियुक्त के लिए विशिष्ट हैं, विचारण में अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करने की युक्तियुक्त संभावना, गवाहों के साथ छेड़छाड़ किए जाने की युक्तियुक्त आशंका, जनता या राज्य के व्यापक हितों और इसी तरह के अन्य विचारों को ध्यान में रखना होगा। यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि जमानत मंजूर करने के प्रयोजनों के लिए विधान मंडल ने "साक्ष्य" के बजाय "विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार" शब्दों का उपयोग किया है जिसका अर्थ है कि जमानत की मंजूरी से संबंधित न्यायालय केवल यह संतुष्ट कर सकता है कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध कोई वास्तविक मामला है और अभियोजन आरोप के समर्थन में प्रथमदृष्टया साक्ष्य प्रस्तुत करने में समर्थ होगा।"

(ग) **राम गोविंद उपाध्याय बनाम सुदर्शन सिंह - (2002) 3 एससीसी 598** में, न्यायमूर्ति बनर्जी के माध्यम से बोलते हुए, इस अदालत ने इस बात पर जोर दिया कि जमानत के मामलों में विवेकाधिकार का प्रयोग करने वाली अदालत को इसे विवेकपूर्ण तरीके से करना होगा। इस बात

पर प्रकाश डालते हुए कि ठोस तर्क के बिना जमानत को निश्चित रूप से नहीं दिया जा सकता है, इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा:

"3. हालांकि जमानत की मंजूरी एक विवेकाधीन आदेश है, लेकिन इसके लिए इस तरह के विवेकाधिकार का विवेकपूर्ण तरीके से इस्तेमाल करने की जरूरत है, न कि सामान्य तौर पर। बिना किसी ठोस कारण के जमानत के आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता है। तथापि, यह अभिलिखित करने की आवश्यकता नहीं है कि जमानत की मंजूरी न्यायालय द्वारा निपटाए जा रहे मामले के प्रासंगिक तथ्यों पर निर्भर है और तथापि, तथ्य हमेशा प्रत्येक मामले में भिन्न होते हैं। हालांकि समाज में अभियुक्तों की नियुक्ति पर विचार किया जा सकता है, लेकिन यह अपने आप में जमानत देने के मामले में एक मार्गदर्शक कारक नहीं हो सकता है और इसे हमेशा जमानत देने वाली अन्य परिस्थितियों के साथ जोड़ा जाना चाहिए और होना चाहिए। अपराध की प्रकृति जमानत देने के लिए बुनियादी विचारों में से एक है - अपराध जितना जघन्य है, जमानत खारिज होने की संभावना उतनी ही अधिक है, हालांकि, यह मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर निर्भर करता है।"

(घ) **कल्याण चन्द्र सरकार बनाम राजेश रंजन उर्फ पप्पू यादव और अन्य (2004) 7 एससीसी 528** मे, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि यह स्थापित है कि जमानत आवेदन पर विचार करने वाला न्यायालय साक्ष्य की विस्तृत जांच नहीं कर सकता है और मामले

के गुण-दोष पर विस्तृत चर्चा नहीं कर सकता है, न्यायालय से जमानत की मंजूरी को न्यायोचित ठहराने वाले प्रथमदृष्टया कारणों को इंगित करने की अपेक्षा की जाती है।

(ङ) **प्रशांत कुमार सरकार बनाम आशीष चटर्जी (2010) 14 एससीसी 496** में, इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि जहां उच्च न्यायालय ने यांत्रिक रूप से जमानत मंजूर की है, वहां उक्त आदेश दिमाग न लगाने के दोष से ग्रस्त होगा, जो इसे अवैध बनाता है। इस न्यायालय ने उन परिस्थितियों के संबंध में व्यवस्था दी जिनके तहत जमानत देने के आदेश को रद्द किया जा सकता है। ऐसा करने में, जमानत देने के लिए अदालत के फैसले को जिन कारकों को निर्देशित करना चाहिए था, उन्हें भी निम्नानुसार विस्तृत किया गया है:

"यह परंपरा है कि यह न्यायालय, आमतौर पर, अभियुक्त को जमानत देने या खारिज करने के उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप नहीं करता है। तथापि, उच्च न्यायालय के लिए भी यह समान रूप से आवश्यक है कि वह इस मुद्दे पर इस न्यायालय के अनेक निर्णयों में अधिकथित आधारभूत सिद्धांतों का विवेकपूर्ण, सावधानीपूर्वक और कड़ाई से अनुपालन करते हुए अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करे।यह अच्छी तरह से स्थापित है कि, अन्य परिस्थितियों के बीच, जमानत के लिए आवेदन पर विचार करते समय ध्यान दिए जाने वाले कारक हैंः(i) क्या यह विश्वास करने का कोई प्रथम दृष्टया या उचित आधार है कि

अभियुक्त ने अपराध किया था; (ii) आरोप की प्रकृति और गंभीरता; (iii) दोषसिद्धि की दशा में दंड की गंभीरता, (iv) जमानत पर रिहा होने पर अभियुक्त के फरार होने या भाग जाने का खतरा; (v) अभियुक्त का चरित्र, व्यवहार, साधन, पद और स्थिति; (vi) अपराध के दोहराए जाने की संभावना; (vii) गवाहों के प्रभावित होने की उचित आशंका; और (viii) निश्चित रूप से जमानत देने से न्याय के विफल होने का खतरा।"

(च) एक अन्य कारक, अभिरक्षा की अवधि है, जिसे जमानत आवेदन पर निर्णय लेने में अदालतों के निर्णय का मार्गदर्शन करना चाहिए।

तथापि, जैसा कि **ऐश मोहम्मद बनाम शिवराज सिंह @लल्ला बाहु और अन्य (2012) 9 एससीसी 446** में उल्लेख किया गया है, अभिरक्षा की अवधि को परिस्थितियों की समग्रता और अभियुक्त के आपराधिक पूर्ववृत्त/ पृष्ठभूमि, यदि कोई हो, के साथ-साथ तौला जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, ऐसी परिस्थितियां जो जमानत की मंजूरी को न्यायोचित ठहरा सकती हैं, जमानत चाहने वाले अभियुक्त की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ-साथ अभियुक्त को छोड़ने में अंतर्वलित सामाजिक चिंता के व्यापक संदर्भ में पर विचार किया जाना है।

(छ) **नीरू यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (2016) 15 एससीसी 422** मे, ज़मानत देने का निर्णय लेते समय संतुलन में रखे जाने वाले विचारों पर इस न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला का उल्लेख करने के बाद, न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा (उस समय न्यायमूर्ति के

रूप में) द्वारा अनुच्छेद 15 और 18 में निम्नानुसार अवलोकन किया गया:

"15. यह कानून की स्थिति होने के कारण, यह बादल रहित आकाश की तरह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय ने अभियुक्त के आपराधिक इतिहास को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है। उच्च न्यायालय ने समता के सिद्धांत को महत्व दिया है। एक हिस्ट्रीशीटर अपराधों की प्रकृति में शामिल है जिसे हमने यहां पुन: प्रस्तुत किया है, यह मामूली अपराध नहीं हैं ताकि उसे हिरासत में न रखा जाए, लेकिन अपराध जघन्य प्रकृति के हैं और इस तरह के अपराध किसी भी तरह से कम नहीं माने जा सकते हैं। इस तरह के मामले एक विश्लेषणात्मक दिमाग को गर्जना और बिजली के साथ मूसलाधार बारिश की संभावना की भांति प्रभावित करते हैं। कानून उम्मीद करता है कि न्यायपालिका इस तरह के आरोपी व्यक्तियों को बड़े पैमाने पर स्वीकार करते समय सतर्क रहेगी और इसलिए, विवेकपूर्ण तरीके से निर्णय के प्रयोग करने पर जोर दिया जाता है।

x x x

18. मामले से अलग होने से पहले, हम लाभ के साथ दोहरा सकते हैं कि यह जमानत रद्द करने की अपील नहीं है क्योंकि रद्द करने की मांग पर्यवेक्षण परिस्थितियों के कारण नहीं की गई है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द करने की मांग की गई है क्योंकि कई प्रासंगिक

कारकों पर ध्यान नहीं दिया गया है, जिसमें अभियुक्तों के आपराधिक पूर्ववृत्त शामिल हैं और यह आदेश को विचलित करता है। इसलिए, अपरिहार्य परिणाम आक्षेपित आदेश की अवहेलना है।"

(ज) **अनिल कुमार यादव बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली (2018)12 एससीसी 129** में, इस न्यायालय ने जमानत के रद्दकरण के आदेश की अपील पर विचार करते हुए कुछ महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया है जिनके बारे में न्यायालय को यह निर्णय करते समय ध्यान रखना चाहिए कि जमानत मंजूर की जाए या नहीं। ऐसा करते हुए, इस न्यायालय ने कहा है कि यद्यपि उन विचारणों की एक विस्तृत सूची विहित करना संभव नहीं है जो जमानत आवेदन का विनिश्चय करने में न्यायालय का मार्गदर्शन करते हैं, किंतु जमानत मंजूर करने वाले आदेश की प्राथमिक अपेक्षा यह है कि यह न्यायालय के आदेश का विवेकपूर्ण प्रयोग का परिणाम होना चाहिए।इस न्यायालय के निष्कर्ष निम्नानुसार निकाले गए हैं:

“17. जमानत मंजूर करते समय, सुसंगत विचार निम्नलिखित हैंः(i) अपराध की गंभीरता की प्रकृति; (ii) साक्ष्य की प्रकृति और परिस्थितियाँ जो अभियुक्त के लिए विशिष्ट हैं; और (iii) अभियुक्त के न्याय से भागने की संभावना; (iv) उसकी रिहाई का अभियोजन पक्ष के गवाहों पर पड़ने वाला प्रभाव, समाज पर इसका प्रभाव; और (v) उसके छेड़छाड़ की संभावना।इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह सूची पूरी नहीं है।जमानत की

मंजूरी या इनकार के संबंध में कोई कठोर नियम नहीं हैं, प्रत्येक मामले पर अपने गुण-दोष के आधार पर विचार किया जाना है।यह मामला हमेशा न्यायालय द्वारा न्याय के विवेकपूर्ण प्रयोग की मांग करता है।"

i) **रमेश भवन राठौड़ बनाम विशनभाई हीराभाई मकवाना मकवाना (कोली) और अन्य, (2021) 6 एससीसी 230** मे, इस न्यायालय ने निर्णयों की एक श्रृंखला को निर्दिष्ट करने के बाद जमानत की मंजूरी के लिए कारण निर्धारित करने की आवश्यकता और महत्व पर जोर दिया।इस अदालत ने स्पष्ट रूप से देखा कि जमानत देने वाली अदालत अपने न्यायिक दिमाग को लागू करने के अपने कर्तव्य को टाल नहीं सकती है और कारणों को इंगित करती है कि क्यों जमानत दी गई या अस्वीकार कर दी गई। इस न्यायालय की टिप्पणियों को निम्नानुसार उद्धृत किया गया हैः

"35. हम वर्तमान मामले में आदेशों के अनुक्रमण में उच्च न्यायालय की टिप्पणियों को अस्वीकार करते हैं यह दर्ज करते हुए की पक्षों के अधिवक्ता "एक और तर्कपूर्ण आदेश के लिए दबाव नहीं डालते हैं।"जमानत देना एक ऐसा मामला है जो आपराधिक न्याय के उचित प्रशासन में अभियुक्तों की स्वतंत्रता, राज्य के हित और अपराध के पीड़ितों को अंतर्वलित करता है। यह एक सुस्थापित सिद्धांत है कि यह निर्धारित करने के लिए कि क्या जमानत दी जानी चाहिए, उच्च न्यायालय, या उस मामले के लिए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के

तहत किसी आवेदन का विनिश्चय करने वाला सत्र न्यायालय गुणागुण के आधार पर तथ्यों के विस्तृत मूल्यांकन पर आरंभ नहीं करेगा क्योंकि आपराधिक विचारण अभी होना है। जमानत पर फैसला सुनाते समय ये टिप्पणियां भी मुकदमे के नतीजे पर बाध्यकारी नहीं होंगी। किंतु जमानत मंजूर करने वाला न्यायालय यह विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए कि जमानत मंजूर की जाए या नहीं, न्यायिक मस्तिष्क को लागू करने और संक्षिप्त कारण, जो भी हो, अभिलिखित करने के अपने कर्तव्य से विरत नहीं हो सकता है। पक्षकारों की सहमति से उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य समाप्त नहीं हो सकता कि वह यह बताए कि उसने जमानत क्यों दी है या क्यों नहीं दी है। यही कारण है कि आवेदन के परिणाम का एक तरफ अभियुक्त की स्वतंत्रता और दूसरी तरफ आपराधिक न्यायाधीश के उचित प्रवर्तन में सार्वजनिक हित पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है.पीड़ितों और उनके परिवारों के अधिकार भी दांव पर हैं। ये मामले दो व्यक्तिगत पक्षों के निजी अधिकारों से संबंधित नहीं हैं, जैसा कि दीवानी कार्यवाही में होता है। आपराधिक कानून को उचित रूप से लागू करना जनहित का मामला है। इसलिए, हमें उस तरीके को अस्वीकार करना चाहिए जिसमें मामलों के वर्तमान बैच में एक के बाद एक आदेशों ने दर्ज किया है कि "संबंधित पक्षों के अधिवक्ता आगे के तर्कसंगत आदेश के लिए दबाव नहीं डालते हैं।" यदि

पर्याप्त कारणों को दर्ज नहीं करने के लिए यह एक छद्म शब्द है, तो इस तरह का फॉर्मूला न्यायिक जांच से आदेश को बचा नहीं सकता है।

36. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के तहत जमानत देना न्यायिक विवेक के प्रयोग से जुड़ा मामला है।जमानत देने या अस्वीकार करने में न्यायिक विवेक किसी अन्य विवेक के मामले में जो एक न्यायिक संस्था के रूप में अदालत में निहित है, असंरचित नहीं है। कारणों को अभिलिखित करने का कर्तव्य एक महत्वपूर्ण सुरक्षा है जो यह सुनिश्चित करता है कि न्यायालय को सौंपे गए विवेकाधिकार का प्रयोग न्यायसंगत तरीके से किया जाए।न्यायिक आदेश में कारणों का अभिलेखन यह सुनिश्चित करता है कि आदेश में अंतर्निहित विचार प्रक्रिया जांच के अधीन है और यह कारण और न्याय के वस्तुनिष्ठ मानकों को पूरा करती है।"

(ञ) हाल ही में **भूपेन्द्र सिंह बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (2021 की आपराधिक अपील संख्या 1279)** वाले मामले में, इस न्यायालय ने यह अवधारित करने की अपीलीय शक्ति के प्रयोग के संबंध में मत व्यक्त किया कि क्या जमानत रद्द करने के आवेदन से भिन्न वैध कारणों से जमानत मंजूर की गई है। अर्थात् यह न्यायालय इस आधार पर जमानत मंजूर करने के विकृत आदेश को अपास्त करने और जमानत रद्द करने के बीच विभेद करता है कि अभियुक्त ने स्वयं गलत आचरण किया है या ऐसे रद्द करने की अपेक्षा करने वाले कुछ नए तथ्यों

के कारण। **महिपाल बनाम राजेश कुमार, (2020) 2 एससीसी 118** को उद्धृत करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त कियाः

“16. जमानत मंजूर करने वाले किसी आदेश की शुद्धता का आंकलन करने में अपीलीय न्यायालय की शक्ति को निर्देशित करने वाले विचार, जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन के आंकलन से अलग हैं। जमानत मंजूर करने वाले किसी आदेश की शुद्धता का परीक्षण इस आधार पर किया जाता है कि क्या जमानत मंजूर करने में विवेकाधिकार का अनुचित या मनमाना प्रयोग किया गया था। कसौटी यह है कि जमानत देने का आदेश विकृत, अवैध या अनुचित है। दूसरी ओर, जमानत रद्द करने के लिए आवेदन की जांच आम तौर पर पर्यवेक्षणीय परिस्थितियों के अस्तित्व की निहाई पर या जिस व्यक्ति को जमानत दी गई है, उसके द्वारा जमानत की शर्तों के उल्लंघन पर की जाती है।"

(ट) अभियुक्त-प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **म्याकला धर्मराजम और अन्य बनाम तेलंगाना राज्य और अन्य - (2020) 2 एसएससी 743** में इस अदालत के फैसले पर भरोसा किया है कि जमानत देने के लिए विस्तृत कारणों को निर्दिष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। सार यह है कि अदालत द्वारा ज़मानत देते हुए मामले के रिकॉर्ड का अवलोकन किया जाना चाहिए था। उक्त मामले के तथ्य यह हैं कि पंद्रह व्यक्तियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 148, 120बी, 302 सपठित धारा 149 के तहत अपराधों के लिए शिकायत दर्ज की गई

थी।इसमें आरोपी ने प्रधान सत्र न्यायाधीश के समक्ष जमानत के लिए एक आवेदन दिया, जिसने केस डायरी, गवाहों के बयानों और अन्य संबंधित अभिलेखों के अवलोकन के बाद आरोपी को एक आदेश के माध्यम से जमानत पर रिहा कर दिया, जिसमें रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री पर विस्तृत चर्चा नहीं की गई थी। उच्च न्यायालय ने इस आधार पर जमानत मुचलका को रद्द कर दिया कि प्रधान सत्र न्यायाधीश ने जमानत मंजूर करने के आदेश में रिकॉर्ड पर सामग्री पर चर्चा नहीं की थी। इस न्यायालय के समक्ष अभियुक्तों द्वारा की गई एक अपील में, ज़मानत देने के आदेश को बहाल कर दिया गया था और ज़मानत देने से पहले कारणों को अभिलेख मे दर्ज करने और अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर चर्चा करने के लिए न्यायालय के कर्तव्य के रूप में निम्नलिखित टिप्पणियां की गईं:

"10. जमानत रद्द करने के मामले में प्रयोग की जाने वाली शक्ति के दायरे पर इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का अवलोकन करने के बाद, यह जांचना आवश्यक है क्या सत्र न्यायालय द्वारा ज़मानत देने वाला आदेश विकृत है और दुर्बलताओं से ग्रस्त है जिसके परिणामस्वरूप न्याय की हानि हुई है। बेशक, सत्र न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विस्तार से चर्चा नहीं की, लेकिन जिस आदेश से जमानत दी गई थी, उससे संकेत मिलता है कि जमानत देने से पहले पूरी सामग्री का अध्ययन किया गया था। यह न तो शिकायतकर्ता प्रत्यर्थी नं॰ 2 और

न ही राज्य का यह मामला है कि अपीलकर्ताओं को जमानत देते समय प्रासंगिक विचारों को सत्र न्यायालय द्वारा ध्यान में नहीं रखा गया है। सत्र न्यायालय का आदेश जिसके द्वारा अपीलकर्ताओं को जमानत दी गई थी, को विकृत नहीं कहा जा सकता क्योंकि सत्र न्यायालय इस तथ्य से अवगत था कि जांच पूरी हो चुकी थी और अपीलकर्ता द्वारा सबूतों के साथ छेड़छाड़ की कोई संभावना नहीं थी।

11. जमानत रद्द करने के लिए दायर याचिका सत्र न्यायालय द्वारा पारित आदेश की अवैधता और जमानत मंजूर किए जाने के बाद उनकी रिहाई के बाद अपीलकर्ताओं के आचरण दोनों के आधार पर है। किसी बोज्जा रविंदर द्वारा पुलिस आयुक्त, करीमनगर को दायर की गई शिकायत को प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा रिकॉर्ड में रखा गया है। शिकायत में कहा गया है कि अपीलकर्ता गांव में स्वतंत्र रूप से घूम रहे थे और गवाहों को धमका रहे थे। हमने शिकायत का अध्ययन किया और पाया कि उसमें लगाए गए आरोप अस्पष्ट हैं। इस बारे में कोई उल्लेख नहीं है कि 15 में से कौन सा आरोपी गवाहों को धमकाने के कार्यों में लिप्त था या साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने का प्रयास कर रहा था।

12. पक्षकारों की ओर से की गई प्रस्तुतियों पर विचार करने और अभिलेख पर सामग्री की जांच करने के बाद, हमारी राय है कि उच्च न्यायालय अपीलकर्ताओं की जमानत रद्द करने में सही नहीं था। सत्र न्यायाधीश द्वारा जमानत मंजूर करने के आदेश को विकृत नहीं कहा

जा सकता है। अपीलकर्ता द्वारा गवाहों को प्रभावित करने का आरोप लगाने वाली शिकायत अस्पष्ट है और गवाहों को धमकाने में अपीलकर्ताओं की संलिप्तता के बारे में कोई विवरण नहीं है। इसलिए, अपीलों को अनुमति दी जाती है और उच्च न्यायालय का निर्णय रद्द कर दिया जाता है।"

तथापि, हमारा यह मत है कि उक्त निर्णय निम्नलिखित कारणों से इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता हैः

सबसे पहले, इस न्यायालय ने पूर्वोक्त निर्णय में अभियुक्त को जमानत देने के आदेश को इस आधार पर बहाल कर दिया कि यद्यपि सत्र न्यायालय द्वारा जमानत देने के आदेश में अभिलेख पर मौजूद सामग्री के बारे में कोई चर्चा नहीं की गई थी, यह सत्र न्यायालय के उस आदेश से स्पष्ट था जिसमें जमानत दी गई थी, कि जमानत देने का निर्णय अभिलेख पर संपूर्ण सामग्री के अवलोकन के बाद लिया गया था। जबकि सामग्री को विशेष रूप से संदर्भित नहीं किया गया हो, जमानत मंजूर करने वाला आदेश इस तथ्य का संकेत था कि यह गहन विचार-विमर्श के बाद तय किया गया था। तथापि, वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेशों में ऐसा कोई संकेत नहीं देखा जा सकता है जो इस तथ्य का सूचक होगा कि जमानत मंजूर करने का निर्णय करने से पूर्व अभिलेख पर रखी गई सामग्री का अवलोकन किया गया था।

दूसरा, संबंधित अभियुक्त द्वारा निर्दिष्ट किया गया मामला एक अपराध था, जो कथित रूप से पंद्रह व्यक्तियों द्वारा किया गया था।इसमें शिकायतकर्ता ने ऐसे पंद्रह व्यक्तियों में से प्रत्येक को विशेष रूप से भूमिकाएं नहीं सौंपी थीं। इस प्रकार यह पाया गया कि आरोप अस्पष्ट होने के कारण प्रथमदृष्टया कोई मामला नहीं बनाया जा सकता था, जिसमें अभियुक्त को जमानत की मंजूरी को न्यायोचित ठहराया गया था। हालांकि, मौजूदा मामले में, सूचनाकर्ता अपीलकर्ता द्वारा केवल एक अभियुक्त का नाम लिया गया है और उसकी भूमिका विशिष्ट है। इसलिए, मामले के तथ्यों पर भरोसा किया गया, जो हमारे सम्मुख है उससे काफी अलग है, हम पाते हैं कि प्रत्यर्थी अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किए गए निर्णय से उसके मामले में कोई सहायता नहीं मिलेगी।

(ठ) अभियुक्त को जमानत देने के आदेश पर पहुंचने के लिए बुद्धि के प्रयोग और विवेक के न्यायपूर्ण प्रयोग की आवश्यकता पर इस न्यायालय का सबसे हालिया निर्णय **बृजमनी देवी बनाम पप्पू कुमार और अन्य (आपराधिक अपील संख्या 1663 / 2021)** के मामले में है जिसका निस्तारण 17 दिसंबर, 2021 को किया गया, जिसमें इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने अभियुक्तों को जमानत देने वाले उच्च न्यायालय के एक अनुचित और आकस्मिक आदेश को रद्द करते हुए कहा कि:

"जबकि हम इस तथ्य के प्रति सचेत हैं कि किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता एक अमूल्य अधिकार है, साथ ही साथ जमानत के लिए आवेदन पर विचार करते समय किसी अभियुक्त के खिलाफ आरोपों की गंभीर प्रकृति और उन तथ्यों को नज़र-अंदाज़ नही किया जा सकता है, जिनका मामले से संबंध है, विशेष रूप से जब आरोप झूठे, तुच्छ या तंग करने वाले प्रकृति के नहीं हो सकते हैं, लेकिन अभिलेख पर लाई गई पर्याप्त सामग्री द्वारा समर्थित हों, ताकि न्यायालय प्रथम दृष्टया किसी निष्कर्ष पर पहुंच सके। जमानत मंजूर करने के लिए आवेदन पर विचार करते समय प्रथमदृष्टया निष्कर्ष को कारणों से समर्थित किया जाना चाहिए और अभिलेख पर लाए गए मामले के महत्वपूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखते हुए उस पर पहुंचा जाना चाहिए।अपराध की प्रकृति, अभियुक्त की आपराधिक पृष्ठभूमि, यदि कोई हो, और दंड की प्रकृति, जो अभियुक्त के विरुद्ध अभिकथित अपराध के संबंध में दोषसिद्धि के पश्चात् होगी, के संबंध में सुझाए गए तथ्यों पर सम्यक विचार किया जाना चाहिए।"

15. किसी न्यायालय द्वारा किए गए निर्णय के लिए कारण बताने के कर्तव्य के पहलू पर, या उस मामले के लिए, यहां तक कि एक अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी द्वारा भी, **क्रांति एसोसिएट्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम मसूद अहमद खान और अन्य (2010) 9 एससीसी 496** में इस न्यायालय के एक निर्णय को संदर्भित करना उपयोगी होगा, जिसमें कई निर्णयों को निर्दिष्ट करने के बाद इस न्यायालय ने अनुच्छेद 47 में

इस बिंदु पर कानून को संक्षेप में प्रस्तुत किया। इस मामले के उद्देश्य के लिए प्रासंगिक सिद्धांत नीचे उद्धृत किए गए हैं:

“(क) कारणों को अभिलिखित करने पर जोर देने का अभिप्राय न्याय के व्यापक सिद्धांत की सेवा करना है कि न्याय न केवल किया जाना चाहिए बल्कि यह भी प्रतीत होना चाहिए कि किया गया है।

(ख) कारणों को अभिलिखित करना न्यायिक और अर्ध न्यायिक या यहां तक कि प्रशासनिक शक्ति के किसी भी संभावित मनमाने प्रयोग पर वैध अवरोध के रूप में भी कार्य करता है।

(ग) कारणों से यह आश्वस्त होता है कि निर्णय करने वाले ने प्रासंगिक आधारों पर और बाहरी विचारों की अवहेलना करके विवेकाधिकार का प्रयोग किया है।

(घ) न्यायिक, अर्ध न्यायिक और यहां तक कि प्रशासनिक निकायों द्वारा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करने के रूप में तर्क वास्तव में निर्णय लेने की प्रक्रिया का एक अनिवार्य घटक बन गया है।

(ङ) कानून के शासन और संवैधानिक शासन के लिए प्रतिबद्ध सभी देशों में जारी न्यायिक प्रवृत्ति प्रासंगिक तथ्यों के आधार पर तर्कसंगत निर्णयों के पक्ष में है। वस्तुतः यह न्यायिक निर्णयन की जीवनधारा है, इस सिद्धांत को न्यायोचित ठहराते हुए कि तर्क न्याय की आत्मा है।

(च) इन दिनों न्यायिक या अर्ध-न्यायिक मत उतने ही भिन्न हो सकते हैं जितने उन्हें देने वाले न्यायाधीश और प्राधिकारी।ये सभी निर्णय एक

सामान्य उद्देश्य की पूर्ति करते हैं जो इस कारण से प्रदर्शित होता है कि प्रासंगिक कारकों पर निष्पक्ष रूप से विचार किया गया है।न्याय वितरण प्रणाली में वादियों के विश्वास को बनाए रखने के लिए यह महत्वपूर्ण है।

(छ) तर्क पर आग्रह न्यायिक उत्तरदायित्व और पारदर्शिता दोनों के लिए एक आवश्यकता है।

(ज) यदि एक न्यायाधीश या अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण अपनी निर्णय लेने की प्रक्रिया के बारे में पर्याप्त रूप से स्पष्टवादी नहीं है, तो यह जानना असंभव है कि निर्णय लेने वाला व्यक्ति पूर्वोदाहरण के सिद्धांत के प्रति निष्ठावान है या वृद्धिवाद के सिद्धांतों के प्रति।

(झ) निर्णयों के समर्थन में तर्क ठोस, स्पष्ट और संक्षिप्त होने चाहिए।तर्कों का ढोंग या "रबर स्टैम्प तर्कों" को एक वैध निर्णय लेने की प्रक्रिया के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए।

(ञ) इस पर संदेह नहीं किया जा सकता है कि पारदर्शिता न्यायिक शक्तियों के दुरुपयोग पर संयम की अनिवार्यता है।निर्णय लेने में पारदर्शिता न केवल न्यायाधीशों और निर्णय लेने वालों की गलतियों की संभावना को कम करती है बल्कि उन्हें व्यापक जांच के अधीन भी बनाती है।(देखें - न्यायिक स्पष्टवादिता के बचाव में डेविड शापिरो [(1987) 100 हार्वर्ड लॉ रिव्यू 731 37)

(ट) सभी सामान्य कानून क्षेत्राधिकारों में निर्णय भविष्य के लिए उदाहरण स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।इसलिए, कानून

के विकास के लिए, निर्णय के लिए तर्क देने की आवश्यकता सार है और वस्तुतः "उचित प्रक्रिया" का एक हिस्सा है।"

हालांकि उपरोक्त निर्णय राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग द्वारा एक गूढ़ आदेश द्वारा एक पुनरीक्षण याचिका को खारिज करने के संदर्भ में दिया गया था, किसी मामले का निर्णय करते समय कारण बताने की आवश्यकता पर उक्त निर्णय पर भरोसा किया जा सकता है।

16. लैटिन सूक्ति "सेसेंट राशन लेगिस सेसट इप्सा लेक्स" का अर्थ है "तर्क कानून की आत्मा है, और जब किसी विशेष कानून का कारण समाप्त हो जाता है, तो कानून भी समाप्त हो जाता है", भी उपयुक्त है।

17. हमने उपरोक्त आक्षेपित आदेश के प्रासंगिक हिस्सों को निकाला है।शुरुआत में, हम देखते हैं कि निकाले गए भाग ही जमानत मंजूर करते समय उच्च न्यायालय के "तर्क" का हिस्सा हैं। जैसा कि उपरोक्त निर्णयों से उल्लेख किया गया है, किसी न्यायालय के लिए जमानत मंजूर करते समय विस्तृत कारण देना आवश्यक नहीं है, विशेष रूप से जब मामला प्रारंभिक चरण में हो और अभियुक्तों द्वारा किए गए अपराधों के आरोपों को इस तरह स्पष्ट नहीं किया गया होगा। यह आभास देने के लिए विस्तृत विवरण दर्ज नहीं किया जा सकता है कि यह मामला ऐसा है जिसके परिणामस्वरूप जमानत देने के लिए एक आवेदन पर एक आदेश पारित करते समय दोषसिद्धि या, इसके विपरीत,

बरी हो जाएगी। हालाँकि, ज़मानत आवेदन पर निर्णय लेने वाला न्यायालय मामले के भौतिक पहलुओं से अपने निर्णय को पूरी तरह से अलग नहीं कर सकता है जैसे अभियुक्त के विरुद्ध लगाए गए आरोप; सजा की गंभीरता यदि आरोप उचित संदेह से परे साबित होते हैं और इसके परिणामस्वरूप दोषसिद्धि होगी; अभियुक्त द्वारा प्रभावित किए जा रहे गवाहों की उचित आशंका; सबूतों से छेड़छाड़; अभियोजन पक्ष के मामले में तुच्छता; अभियुक्तों की आपराधिक पृष्टभूमि; और आरोपी के खिलाफ आरोप के समर्थन में न्यायालय की प्रथम दृष्टया संतुष्टि।

18. अंततोगत्वा, जमानत के लिए आवेदन पर विचार करने वाले न्यायालय को एक ओर अभियुक्त द्वारा किए गए अभिकथित अपराध को ध्यान में रखते हुए और दूसरी ओर मामले के विचारण की शुद्धता सुनिश्चित करते हुए न्यायसंगत रीति से और विधि के स्थापित सिद्धांतों के अनुसार विवेकाधिकार का प्रयोग करना होगा।

19. इस प्रकार, जबकि ज़मानत देने के लिए विस्तृत कारण निर्दिष्ट नहीं किए जा सकते हैं या न्यायालय द्वारा ज़मानत आवेदन पर विचार करते हुए मामले की खूबियों की व्यापक चर्चा नहीं की जा सकती है, एक तर्क या प्रासंगिक कारणों से रहित आदेश का परिणाम नहीं हो सकता है जमानत देने बाबत।ऐसे मामले में अभियोजन पक्ष या आवेदक को एक उच्च मंच के समक्ष आदेश का विरोध करने का अधिकार है। जैसा कि **गुरचरण सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन) 1978 क्रिमिनल**

एलजे 129 में उल्लेख किया गया है। जब एक अभियुक्त को जमानत दी गई है, तो राज्य, यदि इस तरह की जमानत देने के बाद नई परिस्थितियां उत्पन्न हुई हैं, तो द.प्र.सं. की धारा 439 (2) के तहत जमानत रद्द करने की मांग करते हुए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता है। हालाँकि, यदि ज़मानत दिए जाने के बाद से कोई नई परिस्थिति उत्पन्न नहीं हुई है, तो राज्य इस आधार पर ज़मानत देने के आदेश के खिलाफ अपील कर सकता है कि यह विकृत या अवैध है या भौतिक पहलुओं की अनदेखी करके किया गया है, जिससे प्रथम दृष्टया आरोपी के खिलाफ मामला बनता है।

20. उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम अब वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करेंगे। प्रत्यर्थी अभियुक्त के विरुद्ध अभिकथन और साथ ही बार में उठाई गई दलीलों को ऊपर विस्तार से वर्णित किया गया है।इस पर विचार करने पर मामले के निम्नलिखित पहलू सामने आएंगेः

क) प्रत्यर्थी-आरोपी के खिलाफ आरोप मृतक राम स्वरूप खोखर की हत्या के संबंध में आईपीसी की धारा 302 के तहत है, जो सूचनाकर्ता अपीलकर्ता के पिता थे, जो एक विकलांग व्यक्ति थे। इस प्रकार, प्रत्यर्थी अभियुक्त के विरुद्ध आरोपित अपराध गंभीर प्रकृति का है।

(ख) अभियुक्त के विरुद्ध आरोप यह है कि उसने उस मृतक को परास्त कर दिया जो उसके दोनों पैरों में विकृति से पीड़ित था, उसे जमीन पर

पटक दिया, उस पर बैठ गया और उसका गला घोंट दिया। पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट के अनुसार, मौत का कारण पोस्टमॉर्टम से पहले गला घोटना था।

(ग) यह अपीलकर्ता का भी मामला है कि प्रत्यर्थी अभियुक्त भोपावासपाचर गांव में महत्वपूर्ण राजनीतिक प्रभाव का प्रयोग करने वाला व्यक्ति है और उसके कारण, सूचना देने वाले को उसके विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज कराने में कठिनाई हुई। आरोपी को उसकी गिरफ्तारी की मांग करते हुए एक पुलिस स्टेशन के बाहर विरोध प्रदर्शन के बाद ही गिरफ्तार किया गया था।इस प्रकार, यदि जमानत पर हैं तो अभियुक्त द्वारा गवाहों को धमकाने या अन्यथा प्रभावित करने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है।

घ) यह कि प्रत्यर्थी अभियुक्त ने पहले दो मौकों पर अतिरिक्त मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, जयपुर की अदालत के समक्ष द.प्र.सं. की धारा 437 के तहत जमानत की मांग करने वाले आवेदनों को प्रस्तुत किया था। इन्हें 23 जनवरी, 2020 और 6 मार्च, 2020 के आदेशों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया। आरोपी ने द.प्र.सं. की धारा 439 के तहत जमानत अर्जी भी दायर की थी, जिसे अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, जयपुर मेट्रोपोलिस ने 12 मार्च, 2020 के आदेश द्वारा अभियुक्तों के खिलाफ कथित अपराधों की गंभीरता के संबंध में खारिज कर दिया था।

(ङ) उच्च न्यायालय ने दिनांक 7 मई, 2020 के आक्षेपित आदेश में जमानत देने के संदर्भ में मामले के पूर्वोक्त पहलुओं पर विचार नहीं किया है।

21. उपरोक्त उद्धृत निर्णयों के आलोक में वर्तमान मामले के पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करने के बाद, हम नहीं सोचते हैं कि यह मामला प्रत्यर्थी के खिलाफ आरोपों की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए प्रत्यर्थी को जमानत देने के लिए एक उपयुक्त मामला है। आश्चर्यजनक रूप से, राजस्थान राज्य ने आक्षेपित आदेश के विरुद्ध कोई अपील दायर नहीं की है।

22. उच्च न्यायालय ने मामले के पूर्वोक्त तात्विक पहलुओं की अनदेखी कर दी है और एक बहुत ही गूढ़ और आकस्मिक आदेश द्वारा, सुसंगत तर्क के अनुसार, अभियुक्त को जमानत दे दी है। हम पाते हैं कि प्रत्यर्थी अभियुक्त द्वारा दायर जमानत के लिए आवेदन की अनुमति देकर उच्च न्यायालय सही नहीं था। इसलिए दिनांक 7 मई, 2020 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है।

23. प्रत्यर्थी अभियुक्त जमानत पर है। उनका जमानत मुचलका रद्द किया जाता है और उन्हें आज से दो सप्ताह की अवधि के भीतर संबंधित जेल अधिकारियों के समक्ष आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है।

एम. आर. शाह

बी. वी. नागरत्ना

नई दिल्ली

11 जनवरी, 2022

(Translation has been done through AI Tool : SUVAS with the help of Translator)

Disclaimer : The translated judgment in vernacular language made for the restricted use of the litigant to understand it in his/her language and may not be used for any other purposes. For all practical and official purposes, the English version of the judgment shall be authentic and shall hold the field for the purpose of execution and implementation.